Swami Vivekananda Advanced Journal for Research and Studies
Online Copy of Document Available on: www.svajrs.com

ISSN:2584-105X **Pg. 91-94**

व्याकरणशास्त्र में शब्दतत्त्व विवेचन

संगम बाजपेयी
शोधछात्र
संस्कृत एवं प्राकृत भाषा विभाग लखनऊ, लखनऊ विश्वविद्यालय, उत्तर प्रदेश
प्रो. भुवनेश्वरी भारद्वाज
आचार्या
संस्कृत एवं प्राकृत भाषा विभाग लखनऊ, लखनऊ विश्वविद्यालय, उत्तर प्रदेश

Accepted: 22/10/2025
Published: 30/10/2025 ***DOI: http://doi.org/10.5281/zenodo.17569300***

सारांश

संस्कृत भाषा, जिसे देववाणी कहा गया है, केवल संप्रेषण का साधन नहीं बल्कि दिव्य चेतना की अभिव्यक्ति है। व्याकरणशास्त्र में शब्दतत्त्व का विवेचन दर्शन और अध्यात्म दोनों दृष्टियों से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। महर्षि पतंजलि, भर्तृहरि तथा अन्य आचार्यों ने शब्द को केवल ध्वनि नहीं, बल्कि स्फोट रूप में अर्थ का उद्घाटन करने वाली चेतन सत्ता के रूप में प्रतिपादित किया है। व्याकरण दर्शन का मूल प्रतिपाद्य शब्दाद्वैतवाद है, जिसके अनुसार शब्द ही परम सत्य है और समस्त सृष्टि उसी से प्रकट होती है। भर्तृहरि ने वाक् को चार स्तरों—परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी—में विभाजित किया है। परा वाक् ब्रह्मस्वरूप है, पश्यन्ती चेतन्य का प्रतीक, मध्यमा विचार का रूप, और वैखरी व्यवहार में प्रयुक्त वाणी है। यह क्रम वाणी के सूक्ष्म से स्थूल रूप तक के विकास को दर्शाता है। त्रिक दर्शन और शैवागम में वाक् को शक्ति स्वरूप माना गया है, जो इच्छाशक्ति, ज्ञानशक्ति और क्रियाशक्ति के रूप में विश्व का संचालन करती है। इस प्रकार व्याकरण शास्त्र भाषा के नियमों तक सीमित न होकर मानव जीवन, संस्कृति और अध्यात्म का दार्शनिक आधार भी प्रस्तुत करता है। अतः व्याकरण दर्शन में शब्द तत्त्व केवल भाषाशास्त्रीय नहीं बल्कि दार्शनिक और आध्यात्मिक विमर्श का केंद्र है। यह वाक् को सत्य, शिव, सुंदर का अनन्त स्रोत मानते हुए जीवन, विचार और सृष्टि के गूढ़ रहस्यों को उद्घाटित करता है।

मुख्य शब्दः *- व्याकरणशास्त्र, शब्दतत्त्व, स्फोटवाद, वाक् दर्शन, परा वाक्, पश्यन्ती वाक्, मध्यमा वाक्, वैखरी वाक्, शब्दाद्वैतवाद, भर्तृहरि, महर्षि पतंजलि, त्रिक दर्शन।*

प्रस्तावना

विश्व की पुरातन दिव्य भाषा दैवीय वाक् संस्कृत के रूप में सर्वमान्य है। यह दैवीय भाषा अपनी दिव्यता, भव्यता, श्रेष्ठता से ओतप्रोत है। समृद्ध विशिष्ट व्याकरण दर्शन सूक्ष्म चिन्तन के साथ नित्य नूतन, चिर पुरातन है। व्याकरण दर्शन के दिव्य भव्य स्वरूप का अभिनव टेक्नोलाजी (day by day improve in technology) सहारा लिये नहीं रह पा रही। सुपर कम्प्यूटर अपनी भाषा के लिए संस्कृत भाषा को सर्वोत्तम तथा विशिष्ट मानते हैं। संस्कृत वाङ्मय का व्याकरण दर्शन के आरम्भ का काल सूदूर प्राचीनता को लिए हुए हैं। व्याकरण की रचना के लिए अनेकानेक परिभाषित शब्दों का आश्रय लेना पड़ा। लक्षण बनाये गये । परिभाषायें गढ़ी गयी। लक्षणों पर चिन्तन किया गया। मतभेद उत्पन्न हुए। विमर्श से उनका निराकरण किया गया। दर्शन प्रारम्भ हुआ। जिज्ञासा दर्शन है। कहां उत्पन्न हुआ। विचार की प्रक्रिया दर्शन का रूप ग्रहण की। विशिष्ट गहन चिन्तन, मनन, सूक्ष्म विचार और सत्य निष्ठा किसी भी विचारधारा को दर्शन का रूप दे देते हैं। इस प्रकार सुदूर दृष्टि से संस्कृत व्याकरण का भी एक अपना दर्शन तैयार हुआ। इसके मूल तत्त्व बीज के रूप में वैदिक साहित्य में निहित है।

<u>विषयवस्तु</u>

ओंकार पृच्छाम को धातु, किं प्रातिपदिकम्, किं नामाख्यातम किं लिङ्गम, किं वचनम, का विभक्ति, कः प्रत्यय इति। 1

यदि इन प्रश्नों का उत्तर दे दिया जाए तो पूरा व्याकरण दर्शन सम्मुख आ जाता है। जब धातु प्रातिपदिक, नाम, आख्यात आदि के प्रति जिज्ञासा भी तो इसका समाधान भी किया गया था और इनके विशेषज्ञ आचार्य प्रसिद्ध हो चले थे।

आख्यातोपसर्गानुदात्तस्वरितलिङ्गविभक्तिवचनानि च संस्थानाध्यायिन आचार्य पूर्वे बभूवु। 2

आचार्य यास्कने नाम आख्यात आदि के विवरण प्रस्तुत किये हैं और प्रसंगवश कतिपय पूर्वाचार्यों के मतो का उल्लेख किया है। इन सब प्रमाणों से यह सिद्ध हो जाता है कि व्याकरण की दार्शनिक प्रक्रिया ईशा से कई सौ वर्ष पूर्व विकसित हो चुकी थी। किन्तु वर्तमान समय में आचार्य पाणिनि के पूर्व के व्याकरण की बहुत ही अल्प सामग्री समुपलब्ध है। इसी प्रकार पूर्वाचार्यों के व्याकरण- दर्शन सम्बन्धी दृष्टि तथा विचार भी अल्प ही सुरक्षित रह पाएं हैं। इस प्रकार व्याकरण शास्त्र तथा दर्शन आचार्य पाणिनी के बाद प्रवाह को प्राप्त हुआ। जिसकी अविरल निर्मल धारा आचार्य कात्यानि तथा महर्षि पतंजलि के महाभाष्य रूपी महासागर में आकर समाहित हो गयी। यह महासागर उत्तान है। सागर की तरह अगाध है। इस महासागर में रत्न छिपाएं हैं। भर्तृहरि की दृष्टि से पतञ्जलि तीर्थदर्शी हैं।

पुण्यराज ने महाभाष्य कार के लिए है- **महाभाष्य हि बहुविधि विद्यावादयलमाप व्यवस्थितम** । 3

अर्थात महाभाष्य में अनेक विद्यावाद, दर्शन प्रवाद है। महाभाष्यकार महर्षि पतंजलि ने शब्द शास्त्र का प्रणयन करते हुए सूत्र दिया "**अथ शब्दानुशासनम् अथेत्ययम् शब्दोधिकारार्थः प्रयुज्यते । शब्द शासनम नामभधिकृतम वेदितव्यम् । तेषाम शब्दानाम् । लौकिकानां वैदि कानाम च लौकिकास्तावत गोश्वरू, पुरुषो हस्ती शकुनिनिमृगो ब्राह्मण इति। 4.**

गो शब्द इत्यादि शब्द है। नहीं । क्या गल, कंबल, पूंछ आदि शब्द है। वह भी द्रव्य है। क्या नेत्रादि के द्वारा किया जाने वाला संकेत है। वह क्रिया है। तो क्या नील, पीत, शुक्ल शब्द है वह तो गुण है। शब्द नहीं। तो क्या विभिन्न पदार्थों (द्रव्यों) में एक रूप है और जो उनके नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं होता, सब में साधारण अनुगत है वह शब्द है। महाभाष्यकार कहते हैं वह तो जाति है। शब्द उसे कहते हैं जो उच्चरित ध्वनियों से अभिव्यक्त से होकर गलकम्बल, पूंछ, खुर, सींग वाले गो व्यक्तियों का बोध कराता है।

वह शब्द है। तथा लोग व्यवहार में जिस ध्वनि से अर्थ का बोध होता है वह शब्द कहलाता है। एक बालक को लयकारी करते हुए, उसे संकेत करके कहा जाता है शब्द मत करो यह लड़का शब्दकारी (शोर करने वाता) है। अतरू ध्वनि शब्द है। स्फोट को शब्द तथा ध्वनि को शब्द गुण मानने पर भेर्याघात की तरह व्यञ्जक होने से उसका उपकारक है।

एक नगाडा बजाने वाला दस कदम आगे और दस कदम पीछे चल कर नगाड़ा बजाता है, उस स्थिति में नगाड़े में स्फोट तो एक समान होता है किन्तु ध्वनि घटती, बढती प्रतीत होती है। ध्वनि और स्कोट व्यजक और व्यंग्य ये दो परार्थ हैं। श्रवणेंद्रिय के द्वारा शब्दों की व्यञ्जक ध्वनि अल्प अथवा महान् परिलक्षित होती है। स्फोट सब ध्वनियों में अभिन्न ही रहता है। व्यङ्ग्य और व्यंजक दोनों स्वभाव से अवस्थित हैं। व्यक्त शब्दों में तो स्फोट और ध्वनि दोनों विद्यमान रहते हैं। क्योंकि वहां अर्थ का बोध होता है किन्तु अव्यक्त शब्दों में अर्थ वाचकत्व रूप शक्ति न होने से स्फोट नहीं होता। केवव ध्वनि ही होती है।

ध्वनिः स्फोटश्च शब्दानां ध्वनिस्तु खलु लक्ष्यते।
अल्पो महांश्च केषांचिदुभयं तत् स्वभावतः ॥5

भर्तृहरि जी ने ध्वनि के दो प्रकार बताये हैं।

वर्णस्य ग्रहणे हेतुः प्राकृतो ध्वनिरिज्यते ।
वृतिभेदे निमित्तत्वं वैकृतः प्रतिपद्यते ।। 6

व्याकरण दर्शन भी शैव सम्प्रदाय से प्रसूत एक महत्वपूर्ण दर्शन की शाखा है, जिसके आविष्कर्ता महर्षि पतञ्जलि और पोषक श्री भर्तृहरि हैं। इस दर्शन के पोषण में नागेश भट्ट की लघुमञ्जुषा ने भी पर्याप्त योगदान किया है। पतन्जलि ने महाभाष्य में इसका केवल परिचय दिया है किन्तु इसका विधिवत् प्रतिपादन भर्तृहरि ने ही वाक्यपदीप में किया है।

व्याकरण दर्शन का मुख्य प्रतिपाद्य शब्दाद्वैतवाद है। इसके अनुसार शब्द ही एक सत्य तत्व है जिसका स्वरूप है स्फोट । ष्स्फुटत्यथर्थोऽस्मात् इति स्फोट, अर्थात् जिससे अर्थ स्फुटित होता है वह स्फोट कहलाता है। स्फोट से व्यवहारयोग्य शब्द और अर्थ का स्फुटन एक बार में ही नहीं होता। यह चार स्तरों को पार करता हुआ व्यवहार के योग्य

होता है। स्फोट के ये चार स्तर वाणी के चार प्रकार कहे जाते हैं। ये चार प्रकार हैं-परा, पश्यन्ती, मध्यमा एवं वैश्वरी वाक्। यह परा वाक् अक्षर शब्द- ब्रह्म है।

वैखर्या मध्यमायाश्च पश्यन्त्याश्चैतदद्भुतम्।
अनेकतीर्थ भेदायास्त्रय्या वाचः परं पदम्। 7

यह व्यवहार के योग्य नहीं होता। जगत् इसी का विवर्तरूप है। अव्यवहाय होने के कारण भर्तृहरि ने इस परावाक् का त्याग करके त्रयी त्रिक दर्शन का समीक्षात्मक तत्त्वमीमांसीय अध्ययन वाक् का विवेचन किया है।

पश्यन्ती वाक् चैतन्यरूपा है। इसमें ग्राह्य और ग्राहक का भेद ज्ञात नहीं होता। परा वाक् के समान यह भी व्यवहार योग्य नहीं होती। इसमें देश और काल के क्रम का आभास नहीं होता। इसी से इसका नाम अक्रमा या प्रति संहृतक्रमा भी है। किन्तु इसमें मध्यमा वाक् को प्रेरित करने की योग्यता रहती है। इसलिए परावाक् की अपेक्षा यह किंचित् अन्य सूक्ष्म होती है। इसी से इसका नाम ''पश्यन्ती'' सार्थक होता है।

पश्यन्ती वाक् का किंचित् विकसित रूप मध्यमा वाक् कहलाती है। किन्तु इस रूप में भी अभी तक वह अव्यवहार्य ही रहती है। इसमें किंचित् स्फुरण तो होता है किन्तु अन्दर ही अन्दर रहता है। वैखरी की तुलना में यह सूक्ष्म होती है। जब इन्द्रियों के अभिघात से प्राण में स्थूल वृति का उदय होता है तब वैखरी वाक् का प्रदुर्भाव होता है। यही वाक् व्यवहार के योग्य होती है। इसमें शब्दों का क्रम स्पष्ट रूप से प्रतिभासित होता है। चिन्तन मध्यमा से होता है और व्यवहार वैखरी से होता है। मध्यमा वाक् मनोविज्ञान का विषय है।

शब्द के पांच भेद हैं- उच्च, मन्द उपांशु, परमापांशु तथा प्रति-संहृतक्रम । इसमें उच्च और मन्द का सम्बन्ध वैखरी वाक् से है। उपांशु का सम्बन्ध मध्यमा से है तथा परमोपांगु और प्रतिसंहृत क्रम का सम्बन्ध पश्यन्ती वाक् से है।

वैयाकरण तत्वमीमांसा के अन्तर्गत द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय और अभाव के अतिरिक्त एक शक्ति तत्व को भी पृथक् पदार्थ के रूप में स्वीकार करते हैं।

इस प्रकार यह व्याकरण दर्शन शब्दाद्वैतवाद का प्रतिपादक है। यह व्याकरण विद्या सब सुखों का मूल और अपवर्ग का द्वार होने के कारण सब विद्याओं में श्रेष्ठ मानी गयी है।

व्याकरण का सम्बन्ध भाषा से है और भाषा का मूल वाक् है। वाक् (शब्द) का एक स्वतन्त्र दर्शन है। वाक् के बिना जीवन शून्यमय है अर्थात निरर्थक है। जगत में वाक व्यवहार पर व्यापार वरन् ही सभी व्यवहार आधारित है। सभ्यता तथा संस्कृति इसकी गोद में फलती-फूलती है। वाक तत्त्व विचारों के विनिमय का ही एक मात्र माध्यम नहीं अपितु विश्व में जो कुछ सत्य है, शिव है, सुन्दर है उन सब का भी व्यंजक है। वाक् का रूप स्थूल है और सूक्ष्म भी। वाक् का, स्थूल रूप भाषा का प्रतिनिधित्व करती है। सूक्ष्म रूप में वाक् ब्रह्ममय है चिति तत्व है।

वाक् तत्त्वमेव चिति क्रिया रूपमित्यये 8

भर्तृहरि ने वाक्तत्त्व की महिमा का उद्घाटन मुख्य रूप में तीन तरह से किया है, श्रुति के आधार पर, आगम के आधार पर और भाषा विज्ञान के आधार पर । वेदों और उपनिषदों में वाक् पर पर्याप्त विचार किया गया है। भर्तृहरि ने श्रुतियों के उन वाक्यों को उद्धृत किया है जिनमें वाक् सृष्टि का मूल तत्त्व मानी गयी है। सकल सृष्टि नाम और रूप दो वर्गो में विभाजित है। दोनों एक ही के विवर्त हैं -

मामवेद रूपत्वेन ववते रूप चेद नाम भाषेवतस्थे ।
एके तरेकमविभक्त विभेजु प्रागिवाये भेररूप वदति।। 9

वेद में वाक् को सूक्ष्म और अर्थ गया से अविभक्त तत्त्व कहा गया है और इसके अनेक रूप माने गये हैं। भर्तृहरि तीन प्रकार की वाक को स्वीकार किया है। वैखरी, मध्यमा, पश्यन्ती।

वैखरी का अर्थ सभी प्रकार के अर्थी शब्दों को अभि व्यक्त करती है। वैखरी वाक् व्यापार तथा कार्यरूप दोनों हैं।

इसमें व्यक्तवर्ण अव्यक्त वर्ण साधुशब्द और असाधुशब्द (अपभ्रंश) नगाड़े की आवाज, बांसुरी की ध्वनि और वीणा की झंकार जैसे अपरिमित ध्वनि समूह का घोतक शब्द वैखरी है। इसलिये वैखरी के अपरिमित भेद सम्भव है। 10

वैखरी करण व्यापारानुग्रण श्रोत्र ज्ञानविषया शब्दबुद्धिः । 11

मध्यमा वाक् को भर्तृहरि जी ने सन्निवेशिनी कहा है। मध्यमा वाक् का व्यापार भीतरी है। यह वाक् सूक्ष्म प्राण शक्ति के सहारे परिचालित होती है । इसका उपादान केवल बुद्धि है। वक्ता की बुद्धि में शब्द क्रम रूप से प्रतिभासित से होते हैं। मध्यमा में बुद्धिगत आकार के अवभास से क्रम और एक बुद्धि होने के कारण और शब्द का बुद्धि से अभिन्न होने के रूप में हो जाता है। मध्यमा में यद्यपि प्राणवृत्ति का संचार माना जाता है फिर भी प्राण वृत्ति का अतिक्रमण कर शब्द के उपादान के रूप में केवल बुद्धि मात्र ही हो सकती है।

तत्र प्राणवृत्त्यनुग्रहे सत्येव यत्र शब्दरूप पररसवेद्यभवति तदुपाशु ।
अन्तरेण तु प्राण वृत्यनुग्रह यत्र केवलमेव बुद्धौ समाविष्ट रूपो बुद्ध्युपादान एव शब्दात्मा तत परमोपांशु । 12

पश्यन्ती वाक् नाभि क्षेत्र में रहती है। इस वाक से योगी जन सकल संसार की गति को देखते है।

पश्यन्ती तु लोभव्यवहारातीता योगिनां तु तत्रापि प्रकृति प्रत्यय विभागायगतिरस्ति, परायां तु नेति गम्या इत्युक्तम् । 13

त्रिक दर्शन वाक तत्त्व को चार प्रकार का मानता है। परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी।

शैवागम की दृष्टि में परमेश्वर ही शब्द राशि है। उसकी राशि व्यक्त तथा अव्यक्त रूप में विचित्र है। शैवागम में वाक को एक सूक्ष्म या शक्ति के रूप स्वीकार किया गया है। वाक तत्त्व चार प्रकार के भेद की चर्चा अत्यन्त प्राचीन है।

ऋग्वेद में चत्वारि वाक् परिमितपदानि। उपर्युक्त भेद का आधार मान लिया गया है। परन्तु चार से वैदिक ऋषि का तात्पर्य क्या था स्पष्ट नहीं है। आगम में वाक के चार भेद परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी स्वीकृत कर लिए गए और इनकी चर्चा इतनी अधिक हुई कि बाद का सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य और लोक साहित्य प्रभाव में आ गये।

शैवागम के अनुसार वाक का वैखरी रूप क्रिया शक्ति से परिचालित है। इच्छाशक्ति, ज्ञान शक्ति और क्रिया शक्ति ये तीन शैवागम की आधारशिला है। क्रिया शक्ति का प्रतिनिधित्व वैखरी करती है । वैखरी क्रियाशक्तिरुपी है। जिह्वा व्यापार वाक् इंद्रिय का उपलक्षण है और विमर्श स्वभाव वाला है। सभी तरह के व्यापार में क्रियायें विमर्श रूप के भीतर आ जाती है।

निष्कर्ष

व्याकरण शास्त्र और त्रिक दर्शन में शब्द तत्त्व का विवेचन अत्यंत गहन और दार्शनिक दृष्टि प्रदान करता है। संस्कृत भाषा जिसे देववाणी कहा गया है केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं बल्कि दिव्य चेतना की अभिव्यक्ति है। व्याकरण दर्शन ने शब्द को साधारण ध्वनि नहीं माना बल्कि उसे स्फोट रूप में अर्थ उद्घाटित करने वाला चैतन्य तत्त्व स्वीकार किया है। महर्षि पतंजलि भर्तृहरि और अन्य आचार्यों ने शब्द के स्वरूप का ऐसा प्रतिपादन किया है जो न केवल भाषाविज्ञान की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है बल्कि संपूर्ण सृष्टि और जीवन की दार्शनिक व्याख्या भी करता है।

परा वाङ् मूलचक्रस्था पश्यन्ती नाभिसंस्थिता । हृदिस्था मध्यमा ज्ञेया वैखरी कण्ठदेशगा । 14

भर्तृहरि द्वारा प्रतिपादित वाक् के चार स्तर परा पश्यन्ती मध्यमा और वैखरी यह स्पष्ट करते हैं कि वाणी सूक्ष्म से स्थूल की ओर क्रमशः विकसित होती है। परा वाक् ब्रह्म स्वरूप है पश्यन्ती वाक् चेतन्य की प्रतीक है मध्यमा वाक् विचार और मनोविज्ञान से जुड़ी है जबकि वैखरी वाक् व्यवहार में प्रयुक्त होने वाली वाणी है। इन चारों स्तरों के माध्यम से यह सिद्ध होता है कि वाक् केवल उच्चारण या ध्वनि नहीं बल्कि चेतना विचार और क्रिया का समन्वय है।

त्रिक दर्शन और शैवागम में वाक् को शक्ति स्वरूप माना गया है। इच्छाशक्ति ज्ञानशक्ति और क्रियाशक्ति के रूप में वाक् संपूर्ण विश्व का संचालन करती है। इस दृष्टि से व्याकरण शास्त्र केवल भाषा के नियमों तक सीमित नहीं है बल्कि यह मानव जीवन संस्कृति और अध्यात्म के आधारभूत तत्त्वों को भी दृष्टि प्रदान करता है शब्दाद्वैतवाद का प्रतिपादन करते हुए यह माना गया है कि शब्द ही परम सत्य है और उसी से अर्थ ज्ञान और व्यवहार का उद्भव होता है।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि व्याकरण शास्त्र और त्रिक दर्शन का शब्द तत्त्व विमर्श केवल भाषाशास्त्रीय दृष्टि से ही नहीं बल्कि दार्शनिक और आध्यात्मिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। यह वाक् को सत्य शिव और सुंदर का अनन्त स्रोत मानते हुए जीवन को दिशा प्रदान करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. गोपथ ब्राह्मण प्रथम प्रपाठक 1/24 डा ड्यूहे सम्पादित
2. गोपथ ब्राह्मण प्रथम प्रपाठक 1/24 1/27
3. पुष्पराज वाक्यपदीयम् 2/480
4. महाभाष्य प्रथम आह्निक - मोतीलाल बनारसीदास प्राच्य पुस्तक प्रकाशक व विक्रेता बंगला रोड - जवाहर भवन दिल्ली, पेज-2
5. महाभाष्य नवम आह्निक पेज - 708
6. वाक्यपदीयम् ब्रह्मकांड
7 वाक्यपदीय ब्रह्मकाण्डए अम्बाकर्त्रीटीकाए कारिका 142, सम्पूर्णनंदसंस्कृतविश्वविद्यालयरू वाराणसी
8. वाक्यपदीयम् 1/127 हरि वृत्ति
9. वाक्यपदीयम् 1/12 हरि वृत्ति में उद्धृत
10. वाक्यपदीयम् 1/146 हरि वृत्ति
11. महाभाष्यव्याख्या हस्तलेख मद्रास 44/36
12. वाक्यपदीयम् 2/16 हरि वृत्ति पृष्ठ 19
13. उद्योत, महाभाष्य पस्पशान्हिक
14. वाक्यपदीय ब्रह्मकाण्डए अम्बाकर्त्रीटीकाए पृष्ठ 214, सम्पूर्णनंदसंस्कृतविश्वविद्यालयरू वाराणसी

Disclaimer/Publisher's Note: The views, findings, conclusions, and opinions expressed in articles published in this journal are exclusively those of the individual author(s) and contributor(s). The publisher and/or editorial team neither endorse nor necessarily share these viewpoints. The publisher and/or editors assume no responsibility or liability for any damage, harm, loss, or injury, whether personal or otherwise, that might occur from the use, interpretation, or reliance upon the information, methods, instructions, or products discussed in the journal's content.

****